भारत में सहकारिता का स्वरूप

डॉ0 मुकेश कुमार ठाकुर
ग्राम+पो0– कोठरा,
भाया–बहेड़ी,
थाना– हायाघाट,
जिला– दरभंगा
पिन कोड– 847105 (बिहार)

प्रस्तावनाः– सहकारिताएँ ऐसे सभी व्यक्तियों के लिए मुक्त स्वैच्छिक संगठन है जो उनकी सेवाओं का उपयोग करने में समर्थ है और सदस्यता के उत्तरदायित्व को किसी लिंग, सामाजिक, जातीय, राजनैतिक या धार्मिक भेदभाव के बिना रजामंदी से स्वीकार करते हैं।

भारत में सहकारिता के स्वरूप को समझने के लिए सहकारिता संस्थओं को दो भागों में बाँटा जा सकता हैः–

(1) साख संस्थाएँ (2) गैर–साख संस्थाएँ

(।) साख संस्थाएँः–

30 जून 1979 को सभी सहकारी साख संस्थाओं के सदस्यों की संख्या 7.5 करोड़ व कार्यशील पूँजी 13,941 करोड़ रूपये थी। सभी सहकारी संस्थाओं ने 1978–79 में 7,909 करोड़ रूपये के ऋण प्रदान किए थे।

साख संस्थाएँ छः प्रकार की होती है जो इस प्रकार हैः–

(1) राज्य सरकारी बैंकः– ऐसी बैंक एक राज्य में एक ही होती है और यह शीर्ष बैंक कहलाती है। इस बैंक का मुख्य कार्य केन्द्रीय सहकारी बैंकों व प्राथमिक सहकारी समितियों को वित्तीय सहायता देना तथा इनके समाशोधन ग्रह के रूप में कार्य करना है। 1964 के राज्य सहकारी बैंक संघ की स्थापना की गई जिसका उद्देश्य राज्य सहकारी बैंकों की समस्याओं का अध्ययन उनके समाधान के लिए एक सामान्य मंच का निर्माण करना है। पिछले 30 वर्षों में इन बैंकों की प्रगति राज्य सहकारी बैंकों की संख्या 16 से बढकर 27 हो गयी है तथा इसकी कार्यशील पूँजी में भी 88 गुने की वृद्धि हुई है। इसके द्वारा दिये गये ऋणों की मात्रा में भी 64 गुने की वृद्धि की गई है।

(2) केन्द्रीय सहकारी बैंक :– यह बैंक एक निर्धारित क्षेत्र में प्राथमिक साख समितियों के संघ के रूप में कार्य करती है। सामान्यतः इनका कार्यक्षेत्र एक–एक जिला होता है। इसी कारण इन बैंकों को जिला बैंक भी कहते हैं। इन बैंकों के मुख्य कार्य (1) सदस्य समितियों के कार्यों

का निरीक्षण, नियंत्रण एवं पथ–प्रदर्शन करना (2) ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का विकास एवं विस्तार करना (3) प्राथमिक समितियों के कोषों को विकसित करना (4) प्राथमिक समितियों के लिए समाशोधन गृह के रूप में कार्य करना (5) स्थानीय जनता के निक्षेपों को स्वीकार करना तथा (6) जिले में सहकारी आन्दोलन का विकास करना है। व्यवहार में यह बैंक वे सभी कार्य करते हैं जो एक व्यापारिक बैंक द्वारा किये जाते हैं। गत 30 वर्ष में प्रगति एक जिले में एक ही बैंक स्थापित करने के उद्देश्य से इन बैंकों की संख्या में कमी हुई है। लेकिन इनकी सदस्य की संख्या कुछ बढ़ी है। कार्यशील पूँजी भी 88 गुनी बढ़ी है। ऋणी की मात्रा में लगभग 39 गुने की वृद्धि हुई है।

(3) प्राथमिक कृषि साख समितियाँः– यह समितियाँ सहकारी आन्दोलन की आधारभूत एवं महत्वपूर्ण अंग है जो ग्रामीण क्षेत्रों में पायी जाती है। किसी भी ग्राम के 10 या 10 से अधिक व्यक्ति मिलकर इस प्रकार की समिति की स्थापना कर सकते हैं। इन समितियों का मुख्य कार्य अपने सदस्यों की अल्पकालीन एवं मध्यकालीन ऋण आवश्यकताओं की पूर्ति करना है।

30 जून 1982 को इस प्रकार की 95 हजार समितियाँ कार्य कर रही थी, जिनके सदस्यों की संख्या 6.07 करोड़ थी और उसी दिन इनकी कार्यशील पूँजी 3,739 करोड़ रूपये थी। 1981–82 में इन समितियों ने 1,940 करोड़ रूपये की ऋण प्रदान किये जबकि पिछले वर्ष इन्होंने 1,748 करोड़ रूपये के ऋण प्रदान किये थे।

(4) गैर–कृषि साख समितियाँः– यह वे समितियाँ है जिसका कृषि साख मुख्य व्यापार नहीं है बल्कि वे अन्य प्रकार की साख के लिए बना दी गयी है जैसे शहरी बैंक, कर्मचारी साख समितियाँ, प्राथमिक सहकारी बैंक व अन्य। 30 जून 1980 को इस प्रकार की लगभग 20,300 समितियाँ कार्य कर रही थी जिनके सदस्यों की संख्या लगभग 2.87 करोड़ थी।

(5) केन्द्रीय भूमि विकास बैंकः कृषकों को दीर्घकालीन ऋण सुविधाएँ प्रदान करने के लिए एक केन्द्रीय भूमि विकास बैंक की स्थापना की गई है। लेकिन सामान्यतः यह बैंक प्राथमिक भूमि विकास बैंक के माध्यम से ही सहायता करती है। यह बैंक भूमि के विकास एवं सिंचाई तथा कृषि क्षेत्रों के क्रय करने में सबसे अधिक योगदान देती है। प्रारंभ में इन बैंकों का नाम भू–बंधक सहकारी बैंक था लेकिन अभी कुछ वर्ष पूर्व इसका नाम बदल कर भूमि विकास बैंक कर दिया गया है। केन्द्रीय भूमि विकास बैंक राज्य स्तर पर पायी जाती है। इनको कृषि की दीर्घकालीन साख व्यवस्था की धुरी कहा जाता है तथा यह अपनी पूँजी की वृद्धि के लिए ऋण पत्र जारी करती है। यह ऋण पत्र दो प्रकार के होते हैं एक तो वे जिन्हें राज्य सभाएँ, रिजर्व बैंक व स्टेट

बैंक आदि खरीदती है। दूसरे वे जिन्हें ग्रामीन जनता खरीदती है। इन ऋण पत्रों को ग्रामीण ऋण पत्र कहते हैं।

(6) प्राथमिक भूमि विकास बैंकः– यह बैंकों गाँवों में पायी जाती है। इनका कृषकों से सीधा संबंध होता है तथा यह कृषकों को विकास कार्य के लिए जैसे पम्पिंग सेट लगाना, बिजली की लाइन लेना, भारी कृषि यंत्र क्रय करना तथा गिरवी की भूमि को छुड़ाना आदि के लिए दीर्घकालीन ऋण देती है। 30 जून 1982 को इस प्रकार की 1,285 बैंक देश में कार्य कर रही थी। जिनके सदस्यों की संख्या 51 लाख थी तथा कार्यशील पूँजी 1,932 करोड़ रूपये थे।

(।।) गैर–साख संस्थाएँः– यह वे सहकारी संस्थाएँ है जिनका मुख्य कार्य ऋण प्रदान करना न होकर अन्य प्रकार की सहायता जैसे विक्री करना, मकान बनाना, चीनी मिल स्थापित करना, गन्ना खेती करना आदि है। इन गैर–साख संस्थाओं को निम्न वर्गों में रखा जा सकता हैः–

(1) सहकारी विपणन समितियाँः– यह समितियाँ गाँव स्तर पर कार्य करती है तथा अपने सदस्यों के लाभ के लिए कृषि संबंधी पदार्थों का क्रय–विक्रय, एकीकरण, श्रेणीकरण, आवश्यक बीज, खाद, मशीन आदि की पूर्ति करती है और वित्तीय सहायता प्रदान करती है। जो व्यक्ति इन समितियों के ऊपर केन्द्रीय सहकारी संघ या परिषद होती है जो इनके कार्यों में सहयोग करती है। राज्य स्तर पर इनके कार्यों में समन्वय के लिए राज्य सहकारी विपणन संघ होते हैं जो शीर्ष संस्था के रूप में कार्य करते हैं राष्ट्रीय स्तर पर इनके कार्यों में तालमेल बिठाने के लिए एक संघ राष्ट्रीय सहकारी विपणन संघ के नाम से हैं जिसका प्रधान कार्यालय नयी दिल्ली में है।

(2) सहकारी प्रक्रियन समितियाँः– यह वे समितियाँ हैं जो कृषि पदार्थों का प्रक्रियन करती हैं। इसमें कपास ओटने वाली समितियाँ, धान व चावल निकालने वाली समितियाँ, चावल मिल समितियाँ, तेल मिल समितियाँ, फल व तरकारी समितियाँ, आदि आती हैं। इस समय इस प्रकार की समितियों की संख्या 994, सदस्यों की संख्या 4 लाख तथा कार्यशील पूँजी 53 करोड़ है।

(3) सहकारी चीनी मिलः– इस प्रकार की नीति रही है कि केन्द्रीय सरकार की सहकारिता के क्षेत्र में चीनी मिलों की स्थापना हो तथा उनमें वृद्धि हो। इसी के फलस्वरूप सहकारिता के क्षेत्र में चीनी मिलों की संख्या में वृद्धि हो रही है। इस

समय इस प्रकार के 184 सहकारी मिल कार्य कर रहे हैं जिनके सदस्यों की संख्या 21 हजार कृषि साख समितियाँ व 11 लाख गन्ना उत्पादक हैं।

(4) सहकारी कृषि समितियाँः– यह समितियाँ छोटे–छोटे कृषक द्वारा मिलकर खेती करने के उद्देश्य से बनायी जाती हैं। भारत में इस प्रकार की समितियाँ दो प्रकार की हैं– **(i)** संयुक्त कृषि सहकारी समितियाँ, व **(ii)** सामूहिक कृषि सहकारी समितियाँ। इस समय इस प्रकार की समितियों की संख्या क्रमशः 4,947 व 4,750 हैं। इस प्रकार की समितियों का विस्तृत विवरण इसी पुस्तक के ''कृषि प्रणालियाँ एवं सहकारी कृषि'' नामक अध्याय में दिया गया है।

(5) सहकारी बुनकर समितियाँः– यह समितियाँ जुलाहों व बुनकरों द्वारा बनायी जाती हैं। इनका मुख्य उद्देश्य अपने सदस्यों के माल की बिक्री करना है। इस प्रकार की समितियों को सामान्यतः हैण्डलूम समितियों के नाम से पुकारा जाता है क्योंकि यह समितियाँ हाथकरघा का ही उपयोग करती हैं। वर्तमान में इस प्रकार की 14,251 समितियाँ कार्य कर रही थीं जिनके सदस्य 8.19 लाख व कार्यशील पूँजी 116 करोड़ है।

(6) सहकारी उपभोक्ता समितियाँः– उपभोक्ता सहकारी समितियाँ या भण्डार उपभोक्ताओं का एक ऐसा संगठन है जो उपभोग की वस्तुओं की पूर्ति हेतु स्थापित किये जाते हैं। इन भण्डारों या समितियों के प्रमुख उद्देश्य– **(i)** उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर वस्तुएँ उपलब्ध करना, **(ii)** शुद्ध वस्तुएँ उपलब्ध करना, **(iii)** सुव्यवस्थित वितरण प्रणाली स्थापित करना, **(iv)** मध्यस्थों के लाभ को समाप्त करना, **(v)** उत्पादकों की एकाधिकारी प्रवृत्ति को समाप्त करना, **(vi)** मूल्य वृद्धि को रोकने में सहायता देना, एवं **(vii)** उपभोक्ताओं में सहयोग की भावना बढ़ाना, आदि हैं। भारत में इस प्रकार की समितियों की स्थापना प्रथम महायुद्ध के समय ही हुई है।

30 जून, 1983 में 22 राज्य सहकारी उपभोक्ता संघ को 590 केन्द्रीय उपभोक्ता सहकारी भण्डार (4,350 शाखाएँ), 18,690 सहकारी समितियाँ, एक राष्ट्रीय सहकारिता उपभोक्ता संघ का कार्य करते थे। इस प्रकार कुल 23,000 सहकारी फुटकर संस्थान उस दिन भारत में कार्य कर रहे थे। इन सहकारी समितियों व

संघों ने 1982–83 में 1,800 करोड़ के मूल्य की बिक्री की जबकि 1960–61 में उन्होंने केवल 60 करोड़ के मूल्य की बिक्री की थी।

(7) सहकारी औद्योगिक समितियाँः– औद्योगिक समितियों में चमड़ा रंगने वाली, मिट्टी के बर्तन बनाने वाली, फल व सब्जी को डिब्बों में भरने व अन्य दस्तकारी समितियाँ आती हैं। इस समय 18 राज्य–स्तरीय, 144 केन्द्रीय व लगभग 40,000 प्राथमिक समितियाँ कार्य कर रही हैं।

अतः उपर्युक्त वर्णित सहकारी समितियों के अतिरिक्त अन्य प्रकार की समितियाँ लगभग 96 हजार है।

भारत में यह सहकारी आन्दोलन अभी बहुत धीमी गति से आगे बढ़ रहा है। इसके कारण इस प्रकार हैः– **(i)** पूँजी में कमी, **(ii)** कुशल प्रबन्ध का अभाव, **(iii)** सीमित क्षेत्र में ही व्यापार करना, **(iv)** सदस्यों द्वारा बफादारी का परिचय न देना, **(v)** निरीक्षण का अभाव, **(vi)** उच्च प्रबन्धकीय व्ययों का होना, **(vii)** नेतृत्व की कमी, **(viii)** अन्य सहकारी समितियों व संस्थाओं में सम्पर्क का अभाव, **(ix)** आर्थिक साधनों की कमी, **(x)** कर्मचारियों द्वारा बेईमानी, **(xi)** क्रय एवं विक्रय की त्रुटिपूर्ण नीति अपनाना है।

संदर्भ सूची

1. **Third Five Year Plan, pp. 201-02**
2. हेनरी डब्ल्यू, वुल्फ : 'पीपुल्स बैंक, पृ0 421.
3. **B. M. Bhatia : Famines in India, pp. 303-5**
4. वार्षिक प्रतिवेदन भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ, नई दिल्ली, 2005.
5. **Wadia & Merchant : Our Economic Problems, p. 250**
6. **Strickland : Co-operation in India (1938) p. 15**
7. **K.S. Shelvenker : Problems of India (1940), p. 95**
8. **Vera Anstey : Economic Development of India. pp. 189-90**
9. गुन्नार मिर्डाल : एशियन ड्रामा, पृ0 1335.
10. **Economic Times, November 29, 1893**
11. **Vera Aunstey : Economic Development of India. pp. 190-92**